समर्पण

प्रात:स्मरणीय,संत शिरोमणी आचार्य १०८
श्री.विद्यासागरजी महाराज के परम शिष्य
प.पू. मुनिश्री १०८ नियमसागर जी महाराज
प.पू. मुनिश्री १०८ वृषभसागर जी महाराज
तथा
प.पू. मुनिश्री १०८ सुपार्श्वसागर जी महाराज
के वर्ष २०१२ के पावन वर्षायोग
के अवसर पर

पुस्तक मिलने का पत्ता :-

१. जैन संघ पुणे (JSP) माणिकबाग, पुणे.
Website : www.jainsanghpune.com
E-mail : jainsanghpune@gmail.com
Mob. : ९९६०४४२९९३, ९९६०२६८९२९

२. सांगली : वीराचार्य भवन -
सांगली - आकाशवाणी केंद्राजवळ,
सांगली, मो. ९४२२६१६१६७.

३. जयसिंगपूर : श्री. महावीर क. पाटील
कल्याणोदय स्वाध्याय मंडळ, ७ वी गल्ली, गांधी रोड,
वसंत प्लाझा, फ्लॅट नं. ५, जयसिंगपूर.
फोन नं. : (०२३२२) २२५५५१, मो. ८९७५९७४४५१

तृतिय आवृति ३०००
पर्यूषण पर्व, वीर सं.२५३८
इ. स. २०१२

-: प्रकाशक :-
जैन संघ पुणे

मुल्य : ब्रह्मचर्यपालन

प्राक्कथन

जय जिनेन्द्र

आधुनिक युगके भौतिक सुविधाओंके चकाचौंध में संस्कारोंका महत्व उतनाही बढ गया है जितना की अंधेरेमें दियेका। ऐसे मे अगर गुरूओं का सानिध्य और मार्गदर्शन मिल जाय तो सोने पे सुहागा कहलाता है।

हम पुणेवासीयोंके परम सौभाग्य से वर्ष २०११ के वर्षाकाल मे हमे संत शिरोमणी आचार्य १०८ श्री. विद्यासागरजी महाराज के परम शिष्य प. पु. मुनिश्री १०८ अक्षयसागरजी महाराज तथा प. पु. मुनिश्री १०८ नेमिसागरजी महाराज का सानिध्य मिला।

मुनिराजोंके मंगलमय प्रवचनोंसे ''संस्कारोंका बचपनसे ही होना तथा ब्रह्मचर्य का जीवनमे महत्वपूर्ण स्थान'' इस विषयमे विस्तृत जानकारी मिली। ऐसे में सन १९४५ मे प्रकाशित श्री. धनकुमारचंद जैन, इसरी द्वारा लिखित ब्रह्मचर्य का वर्णन करनेवाली किताब हाथ लगी जो है तो बहूत छोटी लेकीन उसमें ब्रह्मचर्य के बारेमें काफी अच्छी जानकारी दी गयी है। प. पु. मुनिश्री १०८ अक्षयसागरजी महाराज के मार्गदर्शन मे हमने इस बहुमूल्य किताब को पुन:प्रकाशित करने का निर्णय लिया। यह किताब आनेवाली नयी पीढी के लिये बहूत फायदेमंद साबित होगी ऐसी हमारी धारणा है। इस किताब का ज्यादा से ज्यादा लोग लाभ उठावे इसी कामना के साथ।

जैन संघ, पुणे - (JSP)

उत्तम ब्रह्मचर्य, अनंत चतुर्दशी - २८/०९/२०१२

सम्मति

पुस्तक - ब्रह्मचर्य-रहस्य

लेखक का ज्ञान केवल किताबी नहीं अनुभूत विषय है। आप सपत्नीक होते हुए भी सात वर्ष से ब्रह्मचारी हैं। इस व्रत का पूर्ण आनन्द तो अखंड ब्रह्मचारी ही पा सकता है तथापि स्वयं इस व्रत को धारण करके दूसरों के लिऐ आदर्श उपस्थित किया है।

इस छोटे से ट्रेक्ट में ब्रह्मचर्य के साधनभूत प्राय: समस्त विषयों का समावेश है। वास्तव में शारीरिक, वाचनिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक उन्नतियों का स्तम्भ एक यही है। यह धर्मों में परम धर्म तथा व्रतों में सर्वोपरि व्रत है। जो इसके महत्त्व को समझ इस परम तत्व को जीवन में उतारेगा वही अभ्युदय एवं निश्रेय का भागी होगा। ब्रह्मचारी को इस व्रत की रक्षार्थ पंचेन्द्रिय एवं मन को निग्रह करना होगा अन्यथा इसका पालन हो ही नहीं सकता । प्रत्येक इन्द्रिय को विकारवर्धक विषयों से हटाकर मन की दुर्वासनाओं से रक्षा करना परमावश्यक है।

जीवन को जितना सादा और शांत बनाया जायेगा उतना ही यह महान तत्व सुलभ होगा। मेरी तो यही सम्मति है कि इस अत्युपयोगी पुस्तक का घर-घर में प्रचार हो। इसी लेखमाला से और भी ३ पुस्तकें ज्ञान-कोष, बृहत्समाधिमरण और स्वास्थ्य विधान निकल चुकी है, वे भी देखने योग्य हैं। लेखक का परिश्रम प्रशस्त है। जनता इससे अधिकाधिक लाभ उठाये तभी परिश्रम सफल होगा।

ब्र. छोटेलाल, उदासीन आश्रम, ईसरी

ता. ०१/११/१९४५

ब्रह्मचर्य-रहस्य पर एक दृष्टि और सम्मति।

इस छोटी सी निबन्धात्मक पुस्तककी पंक्ति-पंक्ति में लेखक की प्रस्तुत विषयाभिव्यक्ति सजीव हो उठी है। इसमें ब्रह्मचर्य की परिभाषा, महिमा, ब्रह्मचर्य से लाभ, उसके साधक बाधक कारण आदि विविध विषयों पर प्रकाश डाला गया है। वास्तव में लेखकने गागरमें सागर भर दिया है। वर्तमान युगमें ब्रह्मचर्य के अभावसे मानव जातिका जो चारित्रिक पतन हुआ है उसका कुपरिणाम प्रत्यक्ष देखने में आता है। अभ्युदय और नि:श्रेयस की सिध्दि कोसो दूर चली गयी है। यही कारण है कि आज विश्व में सर्वत्र सांसरिक दु:ख दावानल में परिदग्ध अगणित आत्माएँ विविध यातनाओं को भोग रही हैं। ऐसी विषम परिस्थिति में आवश्यकता है उन महात्माओं की जो अपने रचनात्मक कार्यो से ओत-प्रोत ऐसा उपदेश संसार के सामने प्रस्तुत करें जो आत्मा और मन के साथ सामंजस्य प्राप्त कर मनुष्य को कर्तव्य पथ पर अग्रसर कर सके। यह पुस्तक उसी उपदेश का प्रतीक है, इसमें लिखित विषयों का मनन और निदिध्यासन करने से ब्रह्मचर्य का पालन आसानी से हो सकता है। इस पुस्तक में ब्रह्मचर्य के रहस्य का स्पष्टीकरण पूर्ण रूपेण किया गया है। ब्रह्मचर्य, स्थास्थ्य आदि विषयों पर आप से मेरा विचार-विमर्श भी हुआ है। आपकी भावना और कर्तव्य प्रशंसनीय हैं। यदि यह पुस्तक धार्मिक परिक्षाओं के अतिरिक्त प्रथमा-प्रवेशिका आदि परीक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों में रख दी जाय तो इससे छात्रों को अधिक लाभ होगा। विदेशी कुसभ्यताओं के द्वारा खान-पान, रहन-सहन आदि विकृत होकर जो उनके चरित्र का पतन हो गया है उसमें काफी सुधार होगा। विद्याध्ययन तो ब्रह्मचर्य के विना हो ही नहीं सकता।

अत: मेरी धारणा है कि यदि इस पुस्तक का काफी रूप में प्रचार हो तो यह अतिशय उपयोगी सिध्द होगी और जनता इससे अधिक लाभ उठायगी।

पं. गोपाल मिश्र शास्त्री

व्याकरणाचार्य, आयुर्वेदाचार्य, काव्यतीर्थ, हिन्दी-साहित्य भूषण

कटरा बाजार, छपरा।

भूमिका

वर्तमान में भारतवर्ष की अवनति का मूल कारण ब्रह्मचर्य का अपरिपक्व अवस्था में घात होना जानकर वर्षों से मेरे अंत:करण में ऐसी भावना उत्पन्न हो रही थी कि एक ऐसी छोटी पुस्तक सरल हिन्दी भाषा में लिखी जावे जिसमें ब्रह्मचर्य विषयक सभी उपयोगी बातों का संक्षेप में वर्णन हो, जिसका प्रचार भारतवर्ष के कोने-कोने में हो और जिसको पढ कर समस्त पाठक पाठिकायें सहजमेंही अपना कल्याण करें और अपने बच्चों का भी भविष्य जीवन सुधारें।

ब्रह्मचर्य से भ्रष्ट होने की कुटेव बालकाल से ही कुसंगति के कारण पड जाती है। बच्चों की ऐसी सोचनीय अवस्था देखकर मन में अपार दु:ख होता है कि किस तरह इनकी रक्षा की जावे। इसमें बच्चों का विशेष दोष नहीं क्योंकि वे अज्ञानता वश इस कुटेव को सीख कर अपना सर्वनाश कर लेते हैं तथा उनके माता पिता भी इस विषय की जानकारी न रखने के कारण उनकी यथोचित रक्षा नहीं कर पाते।

हर्ष का विषय है कि मेरे अंत:करण की भावना आज पूर्ण हुई जो मैं ऐसी एक पुस्तिका को टूटे-फूटे शब्दों में सम्पादन कर जन साधारण के समक्ष रख रहा हूं और उनसे अनुरोध करता हूँ कि इसको अपनाकर अपना एवं अपने बच्चों का कल्याण करें तभी मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा। मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस पुस्तक का बहुलता से घर-घर में प्रचार हो और इसी दृष्टि से इसका मूल्य भी प्राय: लागतमात्र ही रखा गया है।

इसके लिखने में मुझे निम्न लिखित पुस्तकों तथा मासिक पत्रों से बहुत सहायता मिली है अत: इनके लेखक, संपादक और प्रकाशकों का हृदय से आभारी हूँ:-बृहत् जैन शब्दार्णव, श्रीदशलक्षण धर्म, ब्रह्मचर्य विवेक, स्थास्थ्य और योगासन, आदर्शभोजन, महिलादर्श और जीवन साहित्य आदि।

छपने से पूर्व इस पुस्तक को पढकर जिन महानुभावों ने अपनी लिखित सम्मति आदि प्रदान करने की कृपा की है उनका मैं कृतज्ञ हूं और उन्हें हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

पुस्तक को जन साधारण के अर्थ उपयोगी बनाने में यथा सम्भव प्रयत्न किया गया है तथापि अबुध्दिपूर्वक यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो पाठक गण क्षमा करेंगे क्योंकि मनुष्य मात्र से भूल होना असम्भव नहीं।

विनीत

ईसरी बाजार (हजारी बाग) **ता. २०/११/४५**

धनकुमारचन्द जैन

ब्रह्मचर्य-रहस्य का एक अध्ययन

मैने बाबू धनकुमारचन्द जी द्वारा लिखित ब्रह्मचर्य-रहस्य पुस्तक को आद्योपान्त पढा। पढकर अति हर्ष हुआ कि पुस्तक यथा नाम तथा गुण वाली है।

इस युग में सर्व लोक महान-आत्मा बनना चाहते है, परन्तु शास्त्रीय प्राकृतिक नियमों का पालन करने में अरूचि रखते हैं इसीलिये ही जैसे पहले के वृध्द पुरूष थे वैसे अब के युवा नहीं और जैसे अब के युवा हैं वैसे आगे के बालक न होंगे। अत: ब्रह्मचर्य की तरफ अपनी रूचि को बढाना चाहिये।

ब्रह्मचर्य विषय की अनेक पुस्तकें प्राचीन अर्वाचीन सब भाषाओं में विस्तृत विद्यमान है, तथापि अभी भी इस विषय की अनेक छोटी २ पुस्तकों का प्रचार घर घर में होना आवश्यक है। इसी उद्देश्य को लेकर इस लघु पुस्तक को लिखा है। अत: लेखक का परिश्रम स्तुत्य है।

मान्यवर सुयोग्य लेखक वयोवृध्द इस विषय के पूर्ण अनुभवी हैं। अत: उन्होंने शास्त्रीय एवं आयुर्वेद तथा विज्ञान के आधार पर युक्तिपूर्ण इसका निर्माण किया है। इसमें ब्रह्मचर्य का स्वरूप साधक व बाधक कारण आदि का अच्छी तरह से दिग्दर्शन कराया गया है। मेरे अभिप्राय से यह पुस्तक सरकारी शिक्षाक्रम में प्रवेश करने योग्य है। इससे हमारी भावी पीढी सदाचार में तत्पर होकर स्वस्थ रहकर देश का मुख उज्वल करेगी। विशेष जानने के इच्छुक स्वयं इसको पढें। किमधिकं विशेषु।

ईसरी
ता. १/११/४५ }

निवेदक-
शिखरचन्द जैन शास्त्री, न्याय-काव्य-तीर्थ

ब्रह्मचर्य-रहस्य पर दो शब्द

किसी भी विषय का प्रतिपादन करना तो सरल हो सकता है किन्तु उसके अंतस्तत्व को निकालना बहुत ही कठिन है। बाबू धनकुमार चंद जी द्वारा प्रस्तुत पुस्तक की १ प्रति प्राप्त कर जब मैंने उसे पढा तो मालुम किया कि आपने अपनी लेखनी में बहुत ही सामयिक विषय को निबध्द किया है।

''मलयत्तं बलं पुं सां शुक्रा यत्तं तु जीवन''

वीर्य ही मनुष्य का जीवन है, इसकी हानि से प्राणी अकाल में ही यमराज की गोद में जा बैठता है। इसका एकमात्र कारण ब्रह्मचर्य के रहस्य को न समझना ही है। अतएव आपने छुटपन की हस्तमैथुन आदि सर्वस्व नाशकारी व्याधियों से बचने के लिए साधक-बाधक रूपेण सफल उद्यम किया है। बालकों को इसे पढा देने के बाद संरक्षक इस चिंता से निश्चिन्त हो सकते हैं। हम आप सब के कल्याण के लिये आपकी यह अन्यतम देन है। १०-१२ वर्ष की उम्र में बालक को सबसे पहले यह पुस्तक पढाना जरूरी है। आपकी साधना पूर्ण सफल एवं स्तुत्य है। अवश्य ही इसे शिक्षा बोर्ड में अपनवाने का प्रयत्न करना चाहिये। धार्मिक महोत्सवों और खास कर वैवाहिक अवसरों पर अत्युत्तम वितरण करने योग्य ट्रेक्ट है। अलमिति।

ईसरी
ता. १७/५/४६ }

लखमीचंद जैन शास्त्री
आयुर्वेदाचार्य

दो शब्द

दुसरे संस्करण के सम्बन्ध में,

हर्ष का विषय है कि इस पुस्तक का पहला संस्करण बहुत शीघ्र समाप्त हो गया, जिससे मालुम होता है कि जनता ने इसको आदर की दृष्टि से देखा है। पुस्तक का आदर क्या है उसमें दिये सिध्दान्तों का आदर है। इसीलिये मुझे इसका दूसरा संस्करण कुछ, परिवर्धित रूप में निकालना पडा। आशा हैं इसका आदर और भी विशेष रूप से होगा। प्रेस की गडबडी तथा पेपर कन्ट्रोल, आदि के कारण दूसरे संस्करण में विलम्ब हो गया जिस का मुझे खेद है।

जब तक मनुष्य के शरीर में रक्त व वीर्य मौजूद रहता है तभी तक वह जीवित रह सकता है। जितना मनुष्य वीर्य का नाश करता है उतना ही वह रक्तहीन होकर मृत्यु की तरफ झुकता जाता है और जितना अधिक वीर्य को धारण करता है उतना ही अधिक सजीव बनता जाता है तथा दीर्घ काल तक जीवन लाभ करता है। वीर्य हीन पुरूष को कोई भी तार नहीं सकता और वीर्यवान को कोई भी रोग अकाल में मार नहीं सकता। दुर्बल को ही सब रोग सताते हैं।

पानी के पहले पाल बांधने वाली कहावत के अनुसार रोग दूर करने से रोग न होने देना अच्छा है, अतएव पाठक पाठिकाओं से मेरा अनुरोध है कि वे पुस्तक को पढे, इसके नियमों का पालन करें और अपने बाल बच्चों से भी पालन करावे। यदि उनके बच्चे सबोध हों तो उनके हाथ में यह उपकारी पुस्तक देवें और उनसे इसके आधार पर अपना चरित्र बनाने का अनुरोध करें तब उनके बच्चे निसन्देह, तेजस्वी, निरोग, साहसी और दीर्घजीवी होंगे।

यदि मुझे प्रोत्साहन मिला कि जनता ने इस पुस्तक को विशेषरूप से अपनाया है तो मैं अपना परिश्रम सफल समझुंगा और इसके तीसरे संस्करण को और भी बढाने का प्रयत्न करूंगा।

अंत में मेरी भावना यही है कि परमात्मा सबको सुबुध्दि प्रदान करें जिससे उनका उद्धार हो।

जिन लेखकों की पुस्तकों से मुझे सहायता मिली है, उनके लिये मैं हार्दिक धन्यवाद देता हुआ कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

विनीत

भागलपुर
ता. १/३/४१

धनकुमारचन्द जैन

विषय-सूची

	विषय	पृष्ठ
१	ब्रह्मचर्य की परिभाषा।	१
२	ब्रह्मचर्य की महिमा।	१
३	ब्रह्मचर्य से लाभ।	१
४	ब्रह्मचर्य के घात से हानि।	१
५	हस्तमैथुन आदि व्यभिचार के कारण	२
६	हस्तमैथुन आदि का कुपरिणाम।	२
७	ब्रह्मचर्य के साधक कारण	३
८	ब्रह्मचर्य के बाधक कारण	३
९	वीर्य और शरीर	४
१०	वीर्य और मन	४
११	वीर्य रक्षा के फल	४
१२	वीर्यरक्षा के सरल और अचूक उपाय	४
१३	काम-शमन के उपाय	५
१४	दीर्घजीवी होने के उपाय	५
१५	स्वास्थ्य और मनोयोग।	५
१६	स्वास्थ्य और भोजन।	६
१७	स्वास्थ्य के लिऐ कुछ और जरूरी बातें	७
१८	प्राणायाम की विधि	८
१९	ब्रह्मचर्य की ३२ उपयोगी शिक्षायें	९

ॐ

नमः सिध्देभ्यः

ब्रह्मचर्य-रहस्य

ब्रह्मचर्य की परिभाषा - ब्रह्म नाम आत्मा का है और चर्य का अर्थ है रमण करना अर्थात् आत्मा में रमण करने को ब्रह्मचर्य कहते हैं। ब्रह्म का दूसरा अर्थ है वीर्य और चर्य का अर्थ है रक्षण, अर्थात् वीर्य रक्षण करने का नाम ब्रह्मचर्य है, अथवा मैथुन कर्म का सर्वथा त्याग करना सो ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य की महिमा - ब्रह्मचर्य की महिमा अपार तथा अकथनीय है। विश्व के सारे सद्गुण इसी के विशाल उदर में व्याप्त है। प्राचीन काल से अब तक छोटे बडे जितने भी सद्ग्रन्थ देखने में आये है, सबने एक स्वर से ब्रह्मचर्य की महिमा के गीत गाये हैं। साधारण पुरूषों से लेकर ऋषि मुनियों तक ने इसकी महिमा का बखान करते हुए इसे मानव जीवन का आधार स्तम्भ माना है। इसकी महिमा कोई शब्दों में वर्णन नहीं कर सकता। इसे स्वयं अभ्यासी ही जान सकते है, परन्तु वे भी व्यक्त नहीं कर सकते। इसमें वे अमूल्य गुण हैं जिनके कारण आत्मा दुर्व्यसनों से अलिप्त रहता है। इसके आगे बडे-बडे देवता, यक्ष, किन्नर आदि को नत मस्तक होना पडता है। बडे २ महीपों के रत्न-जडित मुकुट इसके पाद-पीठ पर नम्र होते हैं। सार्वभौम शासकों की दृष्टि बराबर इसके चरण कमलों की ओर आकर्षित रहती है। संसार में सर्व श्रेष्ठ शक्ति सम्पन्न गुण एकमात्र ब्रह्मचर्य ही है जो सम्पूर्ण सिध्दियों का रहस्य है।

ब्रह्मचर्य से लाभ- ब्रह्मचर्य के प्रभाव से वीर्यान्तराय कर्म का विशेष क्षयोपशम होकर आत्म-शक्ति बढती है, उपवासादि परीषह सहज ही जीती जाती है। गृहस्थाश्रम सम्बन्धी आकुलता तथा परिग्रह की तृष्णा घटती है। इन्द्रियां वश होती हैं, यहां तक कि वाक् शक्ति स्फुरायमान हो जाती है। ध्यान करने में अडिग चित्त लगता है और अतिशय पुण्यबन्ध के साथ २ कर्मों की निर्जरा विशेष होती है जिससे मोक्षनगर निकट हो जाता है। यह शरीर को स्वस्थ और सुन्दर रखने का प्रधान साधन है। ब्रह्मचर्य से भ्रष्ट होकर शरीर को स्वस्थ रखने के लिये जितने भी प्रयत्न किये जायेंगे सब व्यर्थ होंगे, क्योंकि वीर्य ही शरीर का राजा है जिसके नाश से प्रजा सुरक्षित नहीं रह सकती। ब्रह्मचर्य के ही प्रताप से निर्भयता, साहस, शील, श्रध्दा, भक्ति का श्रीत तथा दृढ संकल्प धारण करने की शक्ति होती है। इसी के प्रताप से चंचल मन वशीभूत रहता है, बुध्दि स्थिर रहती है, चित्त शुध्द और पवित्र रहता है और सत्यानाशी गर्व नष्ट हो जाता है। यह निर्विवाद सत्य है कि यश, कीर्ति, प्रतिष्ठा, दीर्घायु और अपार ऐश्वर्य इसी के द्वारा मनुष्य प्राप्त कर सकता है। ब्रह्मचारी को किसी भी प्रकार का रोग नहीं सताता है। यदि किसी मनुष्य को इस नश्वर शरीर से कोई बडा कार्य करना हो तो उसे पूर्ण ब्रह्मचारी रहना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य सम्पूर्ण विद्या वैभव और सौभाग्य का आदि कारण है तथा स्वतंत्रता और सम्पूर्ण उन्नति का बीज मन्त्र है। अतएव जो मनुष्य शांति, सौन्दर्य, स्मृति, ज्ञान, आरोग्य और उत्तम संतति चाहता है उसे सर्वोत्तम धन ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये।

ब्रह्मचर्य के घात से हानि - इस समय भारतवर्ष की अधोगति का कारण असमय में ब्रह्मचर्य का नष्ट कर देना है। अपनी संतानों के सामने उनके विवाहादि की चर्चा करके और उनका बाल्यकाल में ही विवाह करके हम उन्हें पतन का मार्ग बतला देते हैं। आजकल बालकों के ब्रह्मचर्य पर जरा भी ध्यान नहीं दिया जाता है और न हम स्वयं ही गृहस्थ विधि से ब्रह्मचारी रहते हैं। इसीसे अपनी संतोनों को कमजोर, निस्तेज, रोगी, आलसी, नपुंसक और कर्तृत्व शक्तिहीन बना देते हैं। लोग अधिकांश यह समजते हैं कि औषधियों द्वारा अपनी शक्ति कायम रखेंगे, पर यह नहीं सोचते कि औषधियां अपना प्रभाव तभी दिखायेंगी जब आप ब्रह्मचर्य से रहेंगे।

बहुत से बालक और नवयुवक अप्राकृतिक व्यभिचार, हस्तमैथुन, कुसंगति, गंदे विचारों, स्त्रियोंमें अधिक बैठक, एकान्त विषय चिन्तन और अश्लील तथा गंदी पुस्तकों के पठन से अपने को बर्बाद कर देते हैं। जवान होते २ वे पुरूषत्व हीन नपुंसक हो जाते हैं। ब्रह्मचर्य का नाश करनेवाले को संसार में कोई शक्ति जीवित नहीं रख सकती।

यह जान लेना चाहिये कि अन्न के पचने से रस, रस से रक्त, रक्त से मांस वा मैदा, मैदा से हड्डी, हड्डी से मज्जा, और मज्जा से वीर्य बनता है। वीर्य का पचन नहीं होता। यह तमाम शरीर में इस तरह मिला हुआ रहता है जैसे दूध में मक्खन, ईख में मिठास और तिल में तेल। इन तीनों का सार निकल जाने से जैसी दशा इनकी रह जाती है उससे बुरी दशा वीर्य का नाश करने अर्थात् ब्रह्मचर्य नष्ट कर देने से होती है।

एक दिन के खाये हुए अन्न का वीर्य लगभग ३० दिन ४ घंटे में बनता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि ४० सेर भोजन से १ सेर रक्त और १ सेर रक्त से दो तोला वीर्य बनता है। यदि स्वस्थ्य पुरूष १ सेर रोज भोज करे तो ४० दिन में ४० सेर खायगा। इस तरह दो तोला वीर्य ४० दिन की कमाई है। अब समझ लेना चाहिये कि वीर्य नाश के द्वारा कितनी गाढी कमाई कितनी बुरी तरह बर्बाद कर दी जाती है और इस बर्बादी का शरीर पर क्या असर पडेगा। इस लिये स्वास्थ्य इच्छुक पुरूषों को बडे यत्न से ब्रह्मचर्य की रक्षा करनी चाहिये।

हस्त मैथुन आदि व्यभिचार के कारण - बच्चों में अब्रह्म की प्रवृति के मुख्य तीन कारण हैं-वर्तमान शिक्षा प्रणाली, रहन सहन के ढंग और बुरे संस्कारों का प्रभाव। प्रथम तो माता पिता में स्वयं अब्रह्मवृत्ति का होना, दूसरे बच्चों की कुसंगति की ओर ध्यान न देना, दुराचारी नौकरों के हाथों में पनपने देना, आरम्भ से ही उनमें विलासिता पैदा करना, उन्हें सिनेमा, रेडियो आदि जैसे खेल तमाशों में ले जाना इत्यादि, तीसरे घर की बहू बेटियाँ का अपने गुप्त रस-रंग की कहानियां नि:संकोच बच्चो के सामने अपनी सहेलियों से कहना। इनके श्रृंगार गीत आदि और हाव-भाव समय २ पर ऐसे विषैले होते है जो बच्चों के भावी जीवन पर अमिट छाप लगा देते हैं। इसके बाद जब वे ही बच्चे बडे होकर स्कूलों में जाते हैं तब वहां के बडे लडकों से इन घृणित कर्मों को सीख कर कार्य रूप में परिणत हो जाते है जो बहुतेरों के युवा होने पर भी शीघ्र नहीं छूटते और उनकी आगामी आशाओं पर पानी फिर जाता है। इसी तरह उनका जीवन भी प्राय: नष्ट हो जाता है।

हस्त-मैथुन आदि का कुपरिणाम - यह कुटेव आज कल बालकों में बुरी तरह फैली हुई है। इसके पीछे अनेक बुध्दिमान समझे जाने वाले भी अपना सर्वनाश वैसे ही कर लेते हैं जैसे मूर्ख कहलानेवाले। इस कुटेव का कितना भयंकर परिणाम होता है और हो सकता है इसका अनुमान शायद बहुत ही कम लोग कर पाते हैं। पुरूष स्त्री का संयोग इतना सुलभ नहीं होता जितना कि हस्त-मैथुन का दुर्योग ; क्योंकि स्त्रियों के संयोग में अनेक बाधायें उपस्थित हो जाती है जैसे मासिक धर्म, गर्भकाल, प्रसवकाल तथा रोग आदि ; परन्तु हस्त-मैथुन के लिये कोई रूकावट नहीं होती। हस्त-मैथुन से ये दोष उत्पन्न होते हैं ;-वीर्य में कमी और उसका पतलापन, निरन्तर का स्वप्नदोष, भोग-शक्ति की कमी, नपुंसकता, कब्ज और पाचन शक्ति की कमी, शरीर में कमजोरी, स्मरण शक्ति की कमी, आंखों की रोशनी का मन्द होना, अंडकोष का लटकना, जुकाम खाँसी आदि, उत्साह में कमी, सिर में दर्द, इन्द्रिय में टेढापन, गालों का पिचक जाना, मुख का सौन्दर्य नाश, ठीक भूख न लगना, मटमैले रंग का पिशाब होना, मिजाज का चिडचिडापन और आंखो के चारो तरफ काली लकीरों का पडना इत्यादी।

हस्त मैथुन के उपर्युक्त दोषों के अतिरिक्त अब वीर्य भ्रष्टता के कुछ मुख्य चिन्ह भी दिये जाते हैं जिससे कि लोक पतित बालक बालिका तथा स्त्री पुरूष को शीघ्र ही पहचाय सकें:- वीर्य को नाश करने वाले बालक बडे आदमियों की तरफ आंख से आंख मिलाकर नहीं देख सकते परन्तु अपराधियों की तरह शर्मिंदा होकर नीचे देखते हैं या मुंह छिपाना चाहते है। ऐसे बालकों की सूरत रोनी बन जाती है, प्रसन्न स्वभाव नष्ट होकर चिडचिडा व क्रोधी बन जाता है। चेहरा फीका, पीला व मुर्दे बन जाता है। गालों पर की गुलाबी छटा नष्ट होकर झाई पडने लगती है। आंखे व गाल अन्दर धस जाते हैं। गाल की हड्डियां खुल जाती है। बार बार झूठी भूख लगती है, अपच और कब्जियत की शिकायत रहती है। चटपटे मसालेदार पदार्थ खाने में विशेष रूचि रखते हैं। श्रृंगारिक उपन्यास आदि तथा चित्र पढने व देखने के अत्यंत शौकीन होते है। बैठने के बाद खडे होने पर किसी समय दृष्टि के सामने अंधेरा छा जाता है अथवा मूर्छा आजाने से नीचे गिर पडते हैं। आबोहवा का परिवर्तन उन से सहा नहीं जाता। उनके दिमाग में गरमी छा जाती और नेत्रों में जलन होती है। माथे में, कमर

में, मेरूदंड में और छाती में बार २ दर्द होता है। दांतो के मसूढे फूलने लगते है और मुख से महान दुर्गन्धी आती है। किसी बात में उनकी सफलता नहीं होती, सर्वत्र निन्दित और अपमानित होते हैं। संतति और सम्पत्ति का धीरे २ नाश होने लगता है। अधर्म, व्यभिचार व पाप बढने लगते है। उनकी आयु घटने लगती है और अंत में कभी २ दुख व पश्चाताप के कारण आत्महत्या करने का भी विचार करने लगते हैं। यह सब अत्यंत वीर्यनाश के भीषण चिन्ह हैं।

इसलिये प्रत्येक माता, पिता, गुरू, तथा बन्धुजनों का प्रथम कर्तव्य यही होना चाहिये कि यदि उपर्युक्त लक्षणों में कोई भी एक दोन लक्षण पुत्र-पुत्री अथवा शिष्यों में दिखाई दे तो फौरन पाप के परिणाम का भीषण चित्र तथा ब्रह्मचर्य की श्रेष्ट महिमा स्पष्ट शब्दों में उनके सामने रखें। इसमें लज्जा करना या अपमान समझना मानो अपनी सन्तान का नाश ही करना है।

माता पिता व गुरू ब्रह्मचर्य का स्पष्ट वर्णन करने में प्राय: संकोच करते हैं, परन्तु यह उनकी भारीभूल है। अपने पर बीती हुई दुर्घटनाओं को और उनके दुष्परिणामों को, जो माता पिता तथा गुरूजनों को आज भी उनकी मरजी के विरूध्द भोगने पड रहे है, लडकों से साफ २ कह देवें और उनसे बचे रहने के लिये अपने अनुभूत इलाज को स्पष्ट बतला देवें अथवा इस पथ-प्रदर्शक पुस्तक को अपने प्रिय बालकों व शिष्यों के हाथ में रख देवें जिससे उनका कर्तव्य मार्ग उन्हें स्पष्ट दिखाई दे। गन्दगी या गड्ढे को ढाकने के बजाय उससे बचे रहने का ज्ञान करा देना ही बुध्दिमानी है और यही माता पिता तथा गुरूजनों का पवित्र कर्तव्य है।

वीर्यनाश व व्यभिचार से कई बालक अनेक कठिन रोगों के शिकार बन जाते हैं, तब वे वैद्य व डाक्टरों के मकान छिपे २ ढूंढने लगते हैं और बडे बडे विज्ञापनों के मोह जाल में पडकर दूर २ से औषधियां मंगवाते हैं और बेचारे लाभ की जगह और भी तन मन व धन से बरबाद हो जाते हैं क्योंकि धातु-पौष्टिक औषधियां कामोत्तेजक होती है, इसलिये उनके सेवन से शरीर में यदि कुछ ताकत भी जान पडती हो तो केवल बालकों की भावना और उन औषधियों के साथ खाये हुये दूध मलाई आदि का प्रभाव है। अतएव माता पिता आदि का एक यह भी कर्तव्य हो जाता है कि बालकों के हृदय में इस बात को अच्छी तरह अंकित कर देवें कि संसार में ऐसा कोई भी डॉक्टर या वैद्य समर्थ नहीं है जो औषधियोंद्वारा वीर्यहीन को वीर्यवान अर्थात ब्रह्मचारी बना सके, परन्तु एकमात्र शुध्द मन ही मनुष्यों को ब्रह्मचारी और वीर्य धारन करने के योग्य बना सकता है। इस लिये बालकों को उचित है कि यदि कुसंगति के कारण उन्हें कदाचित कोई रोग हो भी जाय तो सुयोग्य वैद्यों तथा माता पिता व गुरूजनों के सामने अपने रोग का स्पष्ट वर्णन करके उनसे उचित सलाह लेवें। यद्यपि अनेक औषधियां अन्य रोगों के लिये गुणकारी भी होती है परन्तु एक विशुध्द मन ही सम्पूर्ण संसार में वीर्य रक्षाके लिये दिव्यौषधि है।

ब्रह्मचर्य के साधक कारण - रात को १० बजे तक अवश्य सो जाना और सवेरे ४ बजे उठ जाना; मल मूत्र कभी नहीं रोकना तथा इनके त्याग करने के बाद शौच के लिये सदा शीतल जल का व्यवहार करना; खुली और साफ हवा में नित्य प्रात: तथा सायंकाल परिश्रम के साथ टहलना; मुख से श्वास न लेकर सदैव नाक से लेना; रात्रि को सोने से पूर्व ठंडे जल से जननेंद्रिय तथा पैरों को धोना; भोजन करने के पूर्व हाथ,पैर और मुंह को अच्छी तरह साफ करना; जब क्षुधा खूब लगे तभी भोजन करना; रात्रि को भोजन नहीं करना, भोजन ताजा, सादा और नियमित समय पर एक ही बार करना यदि आवश्यकता हो तो दूसरी बार सिर्फ फलाहार करना; भोजन करते समय मौन रखना और सदैव शांति, प्रसन्नता तथा उच्च विचारों के साथ आहार करना क्योंकि जैसे मनोवृत्ति रहेगी वैसेही खाद्य द्रव्य से गुण उत्पन्न होकर आहार रस के द्वारा मनुष्य के विचार सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाते है, लंगोट सदैव अवश्य बांधना, इससे स्फूर्ति बढती है तथा काम विकार से शरीर पीडित नहीं होता; कमसे कम हफ्ते में एक उपवास अवश्य करना, इससे शरीर का दोष पचता है और वीर्य विकार नष्ट हो जाता है तथा शरीर, मन और आत्मा इन तीनों की शुध्दि का उपवास साधन है, भैंस का दूध प्रमाद का कारण तथा निर्मल बुध्दि में बाधक है, अतएव गौ दुग्ध ही सेवन करना उत्तम है।

ब्रह्मचर्य के बाधक कारण - ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये निम्न लिखित बाह्य कारणों से बचना चाहिये। स्त्रियों के सहवास में रहना, स्त्रियों को प्रेम दृष्टि से देखना; स्त्रियों से रीझकर मीठे २ बचन बोलना; पूर्वकाल में भोगे हुये भोगों का चिंतवन करना; गरिष्ट आहार और भर पेट भोजन करना; श्रृंगार विलेपन कर शरीर सुन्दर बनाना; स्त्रियों की सेज पर सोना, बैठना, काम कथा करना; अति कोमल बिछावन पर सोना;

उत्तेजक पदार्थ तथा मिर्च, राई, गरम मसाला, अधिक खटाई मिठाई और गरम तथा मादक वस्तु खाना और कुसंगति का करना। ब्रह्मचारी को सादा और अल्पहारी बनना ही होगा क्योंकि अधिक भोजन करने वाला कभी ब्रह्मचारी नहीं हो सकता।

वीर्य और शरीर - शरीर वीर्य का वास स्थान है। गर्भ में सिर नीचे होने के कारण रज वीर्य का शेषांश बालक के ललाट में बिन्दु स्वरूप १० रत्ती स्थित रहता है जो जन्म लेने पर ५ वर्ष तक रहता है। इस अवस्था में बच्चो के रक्षा के लिये केवल दूध और फल का प्रयोग करना चाहिये। इसी अवस्था में विद्या संस्कार आरम्भ किया जाता है। ५ वर्ष के बाद उसी बिन्दु के द्वारा मज्जा से वीर्य बनने लगता है। यह अपक्व वीर्य ५ से ६ वर्ष तक ललाट से लगा हुआ रहता है। इस अवस्था मे अलोना और मधुर वस्तु, दुध तथा फलों के सिवाय खट्टे, तीखे और कषायले पदार्थों को कभी नहीं देना चाहिये। ९ से १२ अर्थात कुमारपन मे वीर्य दोनों कंधों के बीच गरदन की गांठ मे रहता है। इस अवस्था में भी उपरोक्त आहार ही उत्तम है। १२ वर्ष से १६ वर्ष तक किशोरावस्था में वीर्य मेरूदंड के द्वारा गुदा उपस्थ तक आजाता है। इस अवस्था में वीर्य की रक्षा विद्याध्यन और साधना के बल से होती है। १६ से २५ वर्ष तक वृध्दि अवस्था में वीर्य का उमंग सबल हो जाता है, बुध्दि तार्किक हो जाती है और वीर्य सारे शरीर में फैल जाता है। इस समय इसका कोई प्रधान स्थान नहीं रहता। इसी वीर्य की रक्षा करने पर उसे पुष्ट और परिपक्व बनने पर संसार सुखी होता है। इसीके धारण करने पर मनुष्य नैष्ठिक ब्रह्मचारी बनता है और इसीके द्वारा साधक शांत रस को पाता है।

वीर्य और मन- मन और वीर्य का अभिन्न सम्बन्ध है। दोनों का विकास परस्पर एक दूसरे पर अवलम्बित है। एक के सुधरने पर दूसरा उन्नतशील होगा और एक के विषाक्त होने पर दूसरा भी नष्ट हो जायगा। चित्त वृत्तियां अनर्थ की जड है और यही मन को भटकानेवाली हैं और वीर्य ही चित्त वृत्तियों का रूप है, इसीलिये जैसा वीर्य रहेगा वैसीही वृत्तियां उदित होंगीं और मन भी तद्रूप रहेगा। जिसके शरीर में वीर्य चलायमान रहता है उसका चित्त भी सदा चंचल रहता है। वीर्य चंचल होने से ही पुरूष कामी, क्रोधी तथा उद्दण्ड हो जाता है। वीर्यहीन अथवा चंचल वीर्य धारी व्यक्ति की आत्मा कभी पवित्र नहीं रहती न उसके विचार कभी धर्म संगत रहते और न सानन्द जीवन यात्रा पूर्ण कर सकता है। मन और वीर्य दोनों शरीर रक्षक तथा प्राण पोषक है, इसलिये दोनों की सदा रक्षा करनी चाहिये। अतएव कल्याण चाहनेवाले प्राणियों को उचित है कि वीर्य और मन का सदुपयोग करें और अपने दुर्वृत्त मन को हठ पूर्वक विषयों से हटावें।

वीर्य रक्षा के फल- वीर्य रक्षा से शरीर में शक्ति, मन में स्फूर्ति, उत्साह और शांति तथा गरमी सर्दी सहने की ताकत बढती है। रोगों के हमले से मनुष्य बचा रहता है। वीर्य-रक्षा करनेवाले में यह नहीं होता कि थोडी सरदी लगी और खाट पकडी, जरा धूप लगी और मुरझा गये अथवा अल्प परिश्रम से घबरा गये। वीर्यवान को बडे २ धक्कों की भी परवाह नहीं होती। वीर्यधारी पुरूष में निर्भयता होती है, चिन्त में उच्च भावनाएं होती है, चेहरे पर चमक और सौंदर्य रहता है तथा उसके जीवन में सरसता होती है। वीर्य की रक्षा करनेवाले चिरायु, कर्तव्य-परायण, तेजस्वी और पराक्रमी होते है। वीर्य का शरीर में शोषण होने से परमानन्द की प्राप्ति होती है। वीर्य की रक्षा से आत्मिक गुणों के विकास के सिवाय शारीरिक गुणों का भी विकास होता है। ब्रह्मचारी के शरीर से अपरिमित तेज टपकता है और उसका शरीर वज्र की भांति मजबूत हो जाता है। प्राणी मात्र में जो कुछ जीवन-कला दिखलाई देती है वह सब ब्रह्मचर्य ही का प्रताप है। कुमार अवस्था में सम्हलकर चलने के ही ये सब चमत्कार है।

वीर्य रक्षा के सरल और अचूक उपाय - जो ब्रह्मचर्य खो चुके हैं वे भी वीर्यधारी बन सकते है, यदि वे केवल स्वर के अनुकूल दो कार्य किया करें, एक भोजन और दूसरा जलग्रहन अर्थात् दाहिने स्वर में भोजन करना और बायें स्वर में पानी पीना। जब क्षुधा लगे तब नाक से स्वांस फेंक कर पता लगावें कि कौन स्वर चला रहा है। यदि दाहिना चलता हो तो बिना विलम्ब के तत्काल भोजन कर लेवें। यदि वाम स्वर चलता हो तो ४-५ मिनट बायें करवट लेट जाने से थोडी ही देर में दाहिना स्वर चलने लगेगा तब भोजन करें, परन्तु जल भोजन के साथ नहीं पीकर कमसे कम डेढ घंटे बाद पीना चाहिये। भोजन के डेढ-घंटे बाद जब जल पीने की आवश्यकता प्रतीत हो तब भी पूर्ववत् अपनी स्वांसो का निरीक्षण करें। यदि बायां चलता हो तो जल ग्रहण करें अन्यथा दक्षिण स्वर चलने पर दाहिने करवट ४-५ मिनट लेट जाने से बायां स्वर चलने लगेगा तब जल पीवें। इसी भांति वीर्य रक्षार्थ उपर्युक्त दोनों क्रियाओं को ४-६ माह करने से आशातीत लाभ होगा। कभी दाहिना बायां, दोनों स्वर एक साथ चलते हैं, ऐसे समय में भोजन अथवा जल कुछ भी नहीं लेना चाहिये।

रात्रि को निद्रा के पूर्व रोज पाव घंटा भी अवश्य पवित्र व उच्च संकल्प करना और प्रात:काल उठते ही प्रथम अति प्रेम से एक-दो उत्तम स्तोत्र या भजन नित्य कहना चाहिये।

संकल्प - ईश्वर सच्चिदानन्द है और सर्वत्र व्यापमान है। ईश्वर मेरे भीतर है मैं भी सच्चिदानन्द रूप हूं।

मेरी वृत्तियां दिन पर दिन पवित्र हो रही है, मैं प्रत्येक स्त्री को मातृ भाव से देखता हूँ, मैं अब ब्रह्मचर्य पालन कर रहा हूँ और मेरा उध्दार हो रहा है। प्रभो, मै तेरा हूं और तू मेरा है।

काम-शमन के उपाय - कामोत्तेजन होने पर निम्न लिखित उपायों को करना चाहिये;- भगवान महावीर का नाम उच्च स्वर से लेना तथा ॐ मंत्र एवं वैराग्य भावनाओं का चिंतवन करन; सत्पुरूषों की सत्संगति में जाकर बैठना और उनसे धार्मिक विषयों पर वार्तालाप करना अथवा धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करने लग जाना; अखंड ब्रह्मचर्य के धारी महापुरूषों का ध्यान करने लग जाना; किसी परिश्रम में लग जाना अथवा स्वच्छ वायु में तेजी से भ्रमण करना। बुरी वासनाओं के उदय होने पर कभी एकान्त में नही रहना। यदि काम वेग बढ रहा हो तो थोडा ठंडा जल पी लेना अथवा शीतल जल से स्नान कर लेना। उसके अतिरिक्त अंडकोष एवं अंगूठे के नसों को दबाने से भी कामवेग रूक जाता है। सबसे सरल उपाय तो यह है कि मन को काम वासना से किसी तरह हटा देना। अत:वीर्य रक्षा करनेवालों को सदैव अपने मन पर अधिकार रखना चाहिये जिससे काम का उद्भवही न हो।

दोहा- *जहाँ काम हिरदय धस्यों भयो पुण्य का नाश।*
ज्यों चिनगारी आग की पडी पुरानी घास।।

दीर्घ जीवी होने के उपाय - जन्म और मरण के मध्यकाल को जीवन कहते है। इस अवस्था में हमें बराबर अपने शत्रुओं से संग्राम करना पडता है और बलवान शत्रुओं के द्वारा निर्धारित जीवन अपने समय के पूर्व ही नष्ट हो जाता है, इसलिये जीवन को पूर्ण बनाने के लिये शत्रुओं को पराजित करना होगा।

सब से प्रथम हमें चाहिये कि अन्त:करण के विकार को शांत करें और काम क्रोधादि शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें। धर्म के द्वारा इन्द्रियों को अपने आधीन करें, पश्चात् दुराग्रही मन को एक स्थान पर ठहरावें। फिर क्या? कौन हमें पराजय कर सकता है? इतना करने के बाद हम अपने जीवन को दीर्घजीवी बना सकते है।

इसको सभी जानते है कि स्वांस ही जीवन है। जितनी अधिक स्वांसो का हम व्यय करते है उतना ही अधिक जीवन नष्ट होता है। गर्भकाल में जितनी शक्ति स्वांस रूप में शरीरान्तर्गत प्रविष्ट हुई है उसका जिस दिन शरीर से निर्वासन होगा, याद रहे जीवन भी उसी दिन शेष हो जायगा, इसलिये स्वांसरक्षा से ही जीवन की रक्षा होती है।

प्राणायाम इसके लिये उपयोगी है अतएव नियम पूर्वक उसे धारण करना चाहिये। यदि वह किसी कारण से न हो सके तब सदैव दीर्घ स्वांस लेने का अभ्यास अवश्य करना चाहिये। यदि हम १०० स्वांस भी नित्य बचा लेते है तो १ वर्ष में कितने स्वांस सुरक्षित रहे। इसलिये ऐसे कर्मों से बचना चाहिये जिनमें अधिक स्वांस की क्षति होती है।

स्वास्थ और मनोयोग- मनुष्य जब शरीर-बल, ज्ञान-बल और आत्म-बल तीनों प्राप्त कर लेता है तभी वह पूर्ण स्वस्थ कहलाता है। मनोयोग के ही रूपान्तर ज्ञान-बल और आत्म-बल हैं। कर्मेन्द्रियोंद्वारा ब्रह्मचर्य रखनेवाला और व्यायाम करनेवाला पुरूष भी मानसिक कमजोरी से अस्वस्थ हो जाता है क्योंकि मन का प्रभाव पूरी तौर से पडता है अर्थात् बाह्यरूप से अच्छा रहकर भी मनुष्य मन से विषय-चिन्तन करने से अपने को निकम्मा बना लेता है। मन के इस जबरदस्त प्रभाव के ही कारण चिन्ता चिता से भी भयंकर मानी गयी है। चिन्ताका वास स्थान मन है, अतएव मन में कभी किसी विकार या चिंता को उत्पन्न न होने देना चाहिये। मन को कभी खाली नहीं रहने देना हितकर है क्योंकि इससे मन बुराइयों की तरफ दौडा करता है। यदि खाली भी रहे तो इसे हमेशा उच्च विचारों में लगाना अच्छा है। भगवतभजन, स्वाध्याय, सत्संगति और संकल्प शक्ति की दृढता आदि मन के व्यायाम है जिनसे मन स्वस्थ रहता है और मानसिक शक्ति की उन्नती होती है।

सुख दु:ख का असली कारण मन ही है। यहां तक कहा गया है कि मनुष्य के बन्ध और मोक्ष का कारण भी मन ही है। संसार में सब से तीव्र गति मन की ही बतलाई गई है इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को जीवन सुधार के लिये मनोयोग की ओर ध्यान देने की अत्यन्त आवश्यकता है।

इसको कौन नहीं जानता है कि मन में अचिन्त्य शक्ति है तथा मन का प्रभाव शरीर पर अवश्य पड़ता है, अतएव हमें चाहिये कि इससे एक उत्तम काम लेवें अर्थात नित्य प्रात:काल उठकर भगवान का नाम लेने के बाद विश्वास और दृढता पूर्वक कहें कि मैं निरोग हुं, बलवान हुं, युवा हुं, सुंन्दर हूं, बुध्दिमान हूं, और भाग्यमान हूं। इसके बाद शरीर भर का अपने को राजा समझ कर तथा चित्त को एकाग्र करके हुकूमत के साथ शरीर से यह कह दें कि देखो, तुम्हारे अणु अणु में वह चैतन्य आत्मा व्यापक है जो अजर है, अमर है, परम निर्मल है, अनादि है, अनंत है और निर्विकार है, इस लिये तुम्हें भी रोगी और वृध्द नहीं होना चाहिये; अत: तुम सदा निरोग, सुन्दर, बलवान, तथा युवा बने रहो। धैर्य और विश्वास के साथ इसका नित्य साधन करने से थोडे ही दिनों में शरीर के ऊपर इन बातों का अद्भुत प्रभाव पडेगा और लाभ भी अवश्य होगा। इस प्रकार मनो-बल के द्वारा रोग दूर होकर आश्चर्य जनित चमत्कार दृष्टि गोचर होंगे।

स्वास्थ्य और भोजन - स्वास्थ्य का भोजन के साथ गहरा सम्बन्ध है, इसलिये स्वास्थ्य रक्षा करनेवाले को इस ओर पूरा ध्यान रखना चाहिये। बहुतेरे अधिक खाने को ही स्वास्थ्यकर मानते है, पर वास्तव में यह बात नहीं है।

यह निश्चय है कि जब हम प्राकृतिक नियमों के विरूध्द चलते हैं तभी उसके विकार से शरीर रोगी हो जाता है और हमारी स्वस्थता नष्ट हो जाती है। यदि शरीर रोगी हो गया तब वह न तो शक्तिशाली ही रहता है और न उन्नत ही हो पाता तथा वह पराधीनता यानी औषधियों के बन्धन में पड जाता है, तब उसका वास्तविक सुख जाता रहता है। रोगी से पुरूषार्थ हो नहीं सकता और पुरूषार्थ हीन व्यक्ति तो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों से पृथक निष्क्रिय हो जाता है। इस लिये मनुष्य को सदैव अपना शरीर बिलकुल स्वस्थ रखने का प्रयास करना चाहिये। प्रकृति के नियमों को पालने, व्यायाम, प्राणायाम, आसन, मिट्टी पानी के प्रयोग और भोजन के सुधारादि के द्वारा हम अपने को स्वस्थ रख सकते है और रोग के आक्रमण करने पर उसे भी दूर कर सकते हैं।

फलाहार और अन्नाहार यही दो सात्विक आहार है। इनमें भी सर्वोत्तम फलाहार है। इससे शरीर हल्का, बदन में स्फूर्ति, रंग खिलता हुआ कान्तिदार रहता है। फलों में जो प्राण शक्ति होती है वह भूनने या उबालने से नष्ट हो जोती है। दूध भी उत्तम आहार है। यह बडा बलकर और मस्तिष्क शक्ति को बढानेवाला है। धारोष्ण दूध बहुत फायदेमन्द होता है। दूध का मेल फलों के साथ अच्छा होता है, अन्न के साथ नहीं।

फलाहार से नीचा दर्जा अन्नाहार का है। रोटी, दाल, शाक आदि सादा अन्नाहार है। सादी तौर पर इसे भी खाने से सतोगुण का विकास होता है, परन्तु इसके साथ बहुत खट्टा, मीठा, तीखा, चरपरा न खाना चाहिये क्योंकि इससे स्वास्थ्य को, विशेष कर ब्रह्मचर्य को बहुत हानि पहुचती है। रोटी के लिये आटा हाथ का पिसा हुआ मोटा और चोकरदार होना चाहिये और रोटी बनाने के कुछ देर पहले आटे को फुला लेना उचित है। चावल भी अच्छा भोजन है पर पकाते समय इसका माड न निकालना चाहिये और चावल जितना कम छटा हो उतना ही अच्छा होता है। मशीन के छटे चावलों में पोषक तत्व नष्ट हो जाते है। अधिक पूडी पकवान आदि खाना अच्छा नही, इससे स्वास्थ्य नहीं सुधरता। भोजन अच्छी तरह चबाकर निगलना चाहिये और बहुत प्रसन्न चित्त होकर खाना चाहिये। भोजन करने के समय क्रोध या बुरे विचार कदापि न लाना चाहिये। आत्मा को पवित्र रखना मन के विचारों और सात्विक भोजन पर निर्भर है, इसलिये भोजन बनाते, परोसते और खाते समय भोजन बनानेवाले, परोसनेवाले और खानेवाले तीनों के विचार निर्मल होने चाहिये।

यदि इन ६ प्रश्नों को मनुष्य अच्छी तरह विचार कर भोजन की व्यवस्था करे तो कभी रोग न हो; (१) क्यों? (२) कहां?, (३) कैसे?, (४) कब?, (५) कितना?, (६) क्या खाना चाहिये?

१) क्यों खाना? शरीर की रक्षा के लिये खाना न कि सिर्फ स्वाद के लिये। जो शरीर रक्षार्थ खाते है वे जीने के लिये खाते है और जो सिर्फ स्वाद के लिये खाते हैं वे खाने के लिये जीते है और प्राय: रोगी रहते हैं।

२) कहां खाना? जहां प्रकाश और हवा की आमद पूरी हो और किसी भूखे, दरिद्री तथा रजस्वला स्त्री आदि की दृष्टि नं पडती हो।

३) कैसे खाना? दृष्टि थाली पर रखते हुए मौन तथा शांतिपूर्वक खाना और एक एक ग्रासको इतना चबाना चाहिये कि मुंह के लाट से मिल कर लेई की तरह हो जावे। पानी की घूंट से ग्रासको कभी नहीं निगलना

चाहिये। खाते समय मुंह से किसी तरह की आवाज नहीं होनी चाहिये। पतली वस्तु खाते समय भी सुड़सुड़ शब्द नहीं निकलना चाहिये। ऐसे करने से भोजन के साथ पेट में वायु अधिक प्रमाण में चली जाती है जो उर्ध्व और अधोवायु को बढाता है।

४) कब खाना? सूर्योदय के बाद से सूर्यास्त के एक घंटे पूर्व तक जब क्षुधा खूब लगे तब खाना और दो भोजनों के बीच में कम से कम ५ घंटे का अन्तर अवश्य होना चाहिये। चिन्ता और घबड़ाहट की अवस्था में नहीं खाना, किन्तु प्रसन्न चित्त से भोजन करना लाभप्रद होता है।

५) कितना खाना? इस बारे में कोई कड़ा नियम नहीं बनाया जा सकता क्योंकि यह प्रत्येक व्यक्ति के स्वास्थ्य, शक्ति तथा इच्छा पर निर्भर है। साधारण तौर पर भूख से सर्वदा कम खाना उचित है। यदि चौथाई पेट खाली रखकर खाया जाय तो उत्तम है। असलमें मनुष्यको बहुत कम खानेकी आवश्यकता है।

६) क्या खाना? एक साथ बहुत तरह की चीजों का खाना बहुत बुरा है और बेमेल भोजन के संयोग से भी अवश्य बचना चाहिये अर्थात स्वेतसार (Starchy Food) जैसे रोटी, चावल, आलू, केला, शक्कर, गुड़, घी, तेल आदि को मांस वर्द्धक पदार्थ (Proteins) जैसे दाल, दूध, बादाम, अखरोट, मटर, सेम आदि के साथ नहीं खाना चाहिये क्योंकि मांस वर्द्धक पदार्थ मैदे के रस से हजम होते है और स्वेतसार पदार्थ मुंह के लार से। ऐसा बेमेल भोजन करने से उसकी पाचन क्रिया में गड़बड़ी होती है जो कब्ज होने का कारण है। इसीलिये वर्तमान में १० की सदी मनुष्य कब्ज से दुखी है। मांस वर्धक पदार्थ पहले खाकर तब स्वेतसार पदार्थ खाना चाहिये।

दूध के साथ भात का मेल अच्छा नहीं, इसी तरह नीबू का मेल भात और दाल के साथ अच्छा नहीं। नीबू-जाति के फलों का जब स्वेतसार भोजन के साथ मेल होता है तब वे मुंह के लार के असर को मिटा देते हैं। खट्टे फल और स्वेतसार भोजन के साथ यदि चीनी मिला कर खाई जाय तब बहुत ही बुरा असर होता है। जमाने से चला आता हुआ ऐसा बेमेल भोजन एक दम बन्द कर देना ही उचित है तभी कब्ज से बच सकेंगे जो सब रोगों का मूल कारण है।

सफेद चीनी जिसका आज कल बहुत व्यवहार होता है कभी नही खानी चाहिये। जिसका हाजमा कमजोर हो जिसकी वजह से उसका बुढापे की तरफ झुकाव हो उसे बाजारू गुड़ या चीनी नहीं खाकर प्राकृतिक शक्कर जैसे किशमिश, खजूर और दुसरें मीठे फलों से काम लेना चाहिये। (क्या खाना चाहिये इसके विषय में स्वास्थ्य विधान नामकी पुस्तक में विस्तार से वर्णन है)।

स्वास्थ्य के लिये कुछ और जरूरी बातें - मनुष्य को पवित्र, सदाचारी और निरोग रहने के लिये इन बातों पर भी ध्यान देना आवश्यक है;- विचार हमेशा पवित्र रखना। गन्दे विचार मनुष्य को शक्ति हीन बना देते हैं। प्राय: धातुदौर्बल्य और प्रमेहादि रोग विषयी बातों के चिन्तन से ही पैदा हो जाते है। बहुत ऐश आराम का चसका मनुष्य को नाश कर देता है। इससे अपनी रहन सहन बहुत सादी और नम्र रखनी चाहिये। अभिमान को छोड़कर सबसे विनयपूर्वक व्यवहार करना चाहिये। सत्संगति से विचार पवित्र, ज्ञानवृद्धि और आत्मा का कल्याण होता है। गंदी अश्लील पुस्तकों, व्यर्थ के नाटक, उपन्यास, खराब किस्से कहानी आदि कुसंगति से भी अधिक बुरा परिणाम पैदा कर देते हैं। सब से अधिक महापुरूषों के जीवन चरित्रों को पढना चाहिये। शरीर को स्वच्छ रखने के लिये स्नान नित्य शीतल जल से करना अच्छा है। स्नान के बाद शरीर को दोनों हाथों से अच्छी तरह रगड़ कर जल का बहुभाग सुखाकर तब पोंछना चाहिये। बहुत गरम २ भोजन और चाय आदि मादक वस्तुओं का सदा के लिये त्याग कर देना ही उत्तम है; क्योंकि इनसे पुरूषत्व का नाश, नेत्र-ज्योति-मन्द, दांत और फेफड़ों की खराबी, सुस्ती, तामस, दिमाग की कमजोरी, खांसी आदि बुराईयां पैदा हो जाती है। शौच दो बार जाने की आदत डालनी चाहिये। इससे पेट साफ और शरीर हलका रहता है। अपान वायु का रोकना हानि कारक है। मनुष्य को अपने वचनों के पालन, समय के सदुपयोग, धर्मानुकूल आचरण और सतत उद्योग की ओर हमेशा ध्यान रखना चाहिये।

तन्दुरुस्ती बनाये रखने के लिये निम्न लिखित दो स्वर्ण नियमों को अवश्य पालन करना चाहिये;- यदि मन में हो १) खांय कि न खांय तो न खाना, २) पैखाने जायं कि न जांय तो जाना। इसका मतलब यही है कि यदि किसी समय मन में यह दुविधा हो कि अभी खांय कि न खांय तो न खाने की ओर झुकना ही अच्छा है और यदि शौच के सम्बन्ध में शंका हो कि जांय कि न जांय तो चले जाना ही उचित है। पर लोग प्राय: करते हैं इससे उल्टा। कम खाने की इच्छा होती है तोभी कहते हैं कि चलो, बहुत नहीं, थोडा ही खालें और शौच की कुछ कम हाजत हुई तो कहते है कि जोर से लगेगी तब जायेंगे। इसका नतीजा यही होता है कि बिना भूख के खाने से मंदाग्नि को न्योता मिलता है और पैखाने की इच्छा को रोकने से कब्ज को न्योता मिलता है। इसलिये यदि हम ऊपर के दो नियमों पर चलने की ठान लें तो दोनों रोगों से बचे रहें।

आरोग्य को बनाये रखने के लिये ३ बातें बहुत जरूरी हैं- १) मनका ठीक रखना। क्रोध द्वेषादि मनोविकार स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकर हैं। २) शुध्द आहार और ठीक खाना। ३) शरीर के भीतर पैदा होनेवाले मल की सफाई। शरीर के सफाई के ४ मुख्य अवयव हैं-फेफडा, त्वचा, गुर्दा और आंत। फेफडे की सफाई ताजी साफ हवा में गहरी सांस लेने से होती है जो कसरत करने से हो जाती है। बुढापे में भी चलने फिरने का काम करना चाहिये जिसमें गहरी सांस लेना पडे। यह न हो सके तो घर पर ही गहरी सांस लेनेका अभ्यास करे। इसकी विधि यह है कि खुली हवा में खडे होकर कंधे को थोडा पीछे लेजांय और धीरे २ गहरी सांस खींचे और उसे बाहर निकालें। दिनभर में करीब ५० बार ऐसा करना चाहिये। तेज चाल से चलते हुये टहलता बुढापे में भी सब से अच्छी कसरत है। गुरदे की सफाई के लिये काफी पानी पीना चाहिये। मामूली मौसम में कमसे कम १।। सेर रोज और गरमी में इसका ड्योढा दूना। कम पानी पीने से मल बहुत कडा हो जाता है और कब्ज पैदा करता है। शौचका समय बांध कर उस वक्त जरूर जाना चाहिये, चाहे शौच हो या न हो।

प्राणायाम की विधि - नाक के द्वारा गंभीर श्वांस को खींचकर शरीर के भीतर ले जाना और उसे रोक कर बाहर फेंकने की क्रिया का नाम प्राणायाम है। प्राणायाम के अनेक प्रकार है किन्तु उसके साधारण तीन अंग है। १) पूरक २) कुंभक और ३) रेचक। नाक का दाहिना छेद दाहिने हाथ के अंगुठे से दबाकर बांये छेद से वायु खींचकर दोनों छेद बन्द कर देना पूरक प्राणायाम है। भीतर की वायु जहां तक हो सके रोकना कुंभक प्राणायाम है। भीतर रोकी हुई वायु को नाक का दाहिना छेद खोलकर और बायें छेद को उसी हाथ के बीच की दो अंगुलियों से दबाकर धीरे २ बाहर निकालना रेचक प्राणायाम है। ये तीनों क्रियाएँ एक बार करने से एक प्राणायाम होता है। इसका ध्यान प्रत्येक प्राणायाम में रखना चाहिये कि दूसरे प्राणायाम में नाक के उसी छेद से वायु खींची जाय जिससे पहले छोडी गयी थी, फिर पूर्ववत करना चाहिये। प्राणायाम से शारीरिक उन्नति होती है क्योंकि श्वांस प्रक्रिया से शरीर के भीतरी यंत्रो और जीवन का बहुत सम्बन्ध है। इससे छाती में लचीलापन रहता है। बुढापे में छाती कडी होने से सूखी खांसी बहुत तंग करती है। प्राणायाम करते रहने से यह कष्ट नहीं होता। फेफडे के सब जीर्ण रोगों में इससे लाभ होता है। इससे रक्तप्रवाह को मदद मिलने से हृदय का परिश्रम बचता है जिससे वह बहुत समय तक काम कर सकता है। यही कारण है कि प्राणायाम करने वाले की जीवन शक्ति बढ जाती है।

प्राणायाम में इस बात का पूरा ध्यान रखना आवश्यक है कि श्वांस नाक से ही ली जाय, मुखसे नहीं और सदैव खुली हुई शुध्द जगह में की जाय। सोने का कमरा हवादार हो और सोने के समय मुख कभी न ढका जाय। साधारण सांस लेने मे भी मनुष्य को गहरी सांस लेने की आदत डालनी चाहिये और जितनी देर में सांस खींचा जाय उससे दूने समय में धीरे धीरे निकालना चाहिये। गांजा, भांग, अफीम, तमाकू आदि का सेवन करनेवाले के लिये प्राणायाम अशक्य ही सा रहता है, इसलिये जीवन के नाश करनेवाले इन दुर्व्यसनों से बचने में ही भलाई है क्योंकि इसका बुरा परिणाम दुर्व्यसनी की सन्तानों पर भी पडता है। प्राणायाम करने वालों को सात्विक भोजन और फलों का सेवन करना चाहिये।

ब्रह्मचर्य की ३२ उपयोगी शिक्षाएँ:

ब्रह्मचर्य की ३२ उपयोगी शिक्षाएँ:

१. सच्चरित्रता ही उन्नति का कारण है, उत्तम चरित्र के विना कोई उत्तम नहीं हो सकता।
२. किसी के हृदय को मत दुखाओ, यह भारी पाप है।
३. श्रध्दा ही हमें उन्नति के दुर्ग पर बिठायेगी।
४. भक्ति ही शक्ति का द्वार है।
५. भलाई की लालसा करो बडाई की नहीं।
६. सोंच समझकर आगे पैर रखे विना परिणाम सोचे कार्य में हाथ मत डालो।
७. मधुर भाषण ही वशीकरण मन्त्र है।
८. निर्दयता दानवी कृति है, यह ब्रह्मचर्य को नाश कर देगी।
९. प्रकृति के चरणों में ही स्वर्ग है, उसे अपनाओ।
१०. अपने लिये जैसा चाहतो हो, दूसरों के लिये भी वैसा ही समझो।
११. ऋण मत लो और किसीसे विश्वासघात मत करो।
१२. वही धन्य है जो अन्त:करण से पवित्र है, वही परमात्मा का दर्शन करेगा।
१३. धैर्य को पकडे रहो, इसे न छोडना, इससे पृथक होते ही ब्रह्मचर्य पद से गिर जाओगे।
१४. धर्म से विमुख मत चलो, यही उत्तम साथी है।
१५. संसार में किसी को तुच्छ मत समझो, तुच्छ और नीच वही है जो दूसरों को समझता है।
१६. शील ही मानवों का भूषण है, इसे धारण करो।
१७. आलस्य को छोडो और सदैव प्रसन्न रहा करो।
१८. तृष्णा से दूर रहो, वह जितना अपनी इच्छा पूर्ति का ध्यान रखती है उतना न्याय का नहीं।
१९. सत्संगति ही सब गुणों को देने वाली है।
२०. बडे बनने का सबसे प्रथम उपाय वीर्य रक्षा है।
२१. ब्रह्मचर्य धारण करने में कठिनाइयों को देख कभी घबराये नहीं।
२२. व्यायाम ही सर्वोत्तम औषधि है।
२३. नेत्र आत्मा की खिडकी है, उसका दुरूपयोग मत करो।
२४. चंचलता को हटाकर शांति स्थापन करो।
२५. मादक वस्तुओं का उपयोग करना अपना नाश करना है, इससे ब्रह्मचर्य नष्ट हो जायगा।
२६. इच्छा होने पर मार्ग आप ही आप सुझने लगता है।
२७. शरीर को सुन्दर मत बनाओ, बुध्दि को अलंकृत करो।
२८. मन और वाणी को पवित्र रखो, तभी ब्रह्मचर्य की प्राप्ती होगी।
२९. आहार-विहार पर ध्यान दो और उपकारी नियमों को कभी मत भूलो।
३०. हृदय को कामवासनाओं का घर मत बनाओं नहीं तो पवित्र वृत्तियां छोडकर चली जायेंगी।
३१. संसार का मूलतत्व अध्यात्म जगत् में है, आत्मा की खोज करो।
३२. सदैव ब्रह्मचर्य का ध्यान रखो, कभी कुचेष्टा में मत पडो महात्माओं के उपदेशों पर चलो, नि:सन्देह अपना व्रत सफल होगा।

पतित समाज में पवित्रता का प्रचार कर दो।
बच्चे २ में ब्रह्मचर्य का पुनीत भावन भर दो।।
हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिये।
शीघ्र सारे दुर्गणों को दूर हमसे कीजिये।।
लीजिये हमको शरण में हम सदाचारी बनें।
ब्रह्मचारी, धर्म रक्षक वीर व्रतधारी बनें।।